जम्मू कश्मीर : ~~एक~~ ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

जम्मू-कश्मीर राज्य की स्थापना
— एक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

डा० भूषण कुमार कौल डेम्बी

78114
5180
37555
120849
101387
222236

15948
20293
59146
101387

जम्मू-कश्मीर राज्य की स्थापना
— एक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

डा. भूषण कुमार कौल (डेम्बी)

~~सम्पूर्ण~~ जम्मू-कश्मीर राज्य का क्षेत्रफल २,२२,२३६ वर्ग कि.मी. है। इसमें ७८,११४ वर्ग कि.मी. ~~का इलाका~~ पाकिस्तान द्वारा अवैध रूप से अधिकृत है; ५,१८० वर्ग कि.मी. ~~का~~ इलाका पाकिस्तान ने चीन को अवैध रूप से सौंप दिया है और ३७,५५५ वर्ग कि.मी. के क्षेत्र पर चीन ने १९६२ के आक्रमण के ~~फलस्वरूप~~ बाद अधिकार कर लिया है। इस प्रकार ~~सम्पूर्ण~~ राज्य का केवल आधा भाग १,०१,३८७ वर्ग कि.मी. इस समय भारत के नियन्त्रण में है। इस प्रदेश में तीन पूर्व राज्य कश्मीर, जम्मू एवं लद्दाख सम्मिलित हैं, जो भौगोलिक, सांस्कृतिक, भाषा तथा जातीय दृष्टि से एक दूसरे से सर्वथा भिन्न हैं। कश्मीर घाटी का क्षेत्रफल १५,९४८ वर्ग कि.मी. और जन संख्या ३१,३४,९०४ है, जम्मू २६,२९३ वर्ग कि.मी. तक विस्तृत है और आबादी २७,१८,११३ तथा लद्दाख का क्षेत्र ५९,१४६ वर्ग कि.मी. और आबादी १,३४,३७२ है।

भौगोलिक स्थिति एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

कश्मीर

भारत के उत्तर पश्चिम में स्थित कश्मीर घाटी असम अण्डाकार आकार की है और इस का धरातल समुद्र से ५ हज़ार फुट ऊँचा है। यह ~~विशाल~~ उपत्यका चारों ओर पर्वत-मालाओं से घिरी हुई है। दक्षिणतम स्थान के कुछ भाग को छोड़ कर हर दिशा में ये पर्वत १८ हज़ार फुट से अधिक ऊँचे हैं अधिकतर इनकी ऊँचाई १२ हज़ार फुट से

डा. भूषण कुमार कौल डेम्बी, इतिहास विभाग, कश्मीर विश्वविद्यालय, श्रीनगर (कश्मीर)
[illegible]

तक ऊँचे हैं

~~अधिक है और कहीं कहीं पर उनके शिखर 18000 फुट की ऊंचाई तक पहुंचते हैं।~~

कश्मीर घाटी की उत्पत्ति का एक रोचक ~~कथा~~ पौराणिक वृत्तांत कश्मीर के सुप्रसिद्ध पुराण 'नीलमतपुराण' में अंकित है। इसके अनुसार सम्पूर्ण कश्मीर घाटी पुरातनकाल में चारों ओर पर्वतों से घिरा एक विस्तृत सर (ताल) थी जिसका नाम सतीसर था। आधुनिक भूवैज्ञानिक अनुसन्धानों ने इस पौराणिक आख्यान की पुष्टि की है। भूवैज्ञानिक परिवर्तनों और भीषण ज्वालामुखी विस्फोटनों के फलस्वरूप घाटी के पश्चिम में पर्वतों में दरार पड़ने से ताल का पानी निस्सृत हुआ और वर्तमान घाटी की उत्पत्ति हुई। "नीलमतपुराण" में जल-निस्सरण की इस महत्वपूर्ण घटना का पौराणिक ढंग से वर्णन किया गया है और घाटी की स्थापना का श्रेय कश्यप मुनि को दिया गया है।

अनुपम ~~प्राकृतिक~~ सौन्दर्य ~~से~~ युक्त विभूषित कश्मीर घाटी प्राचीन काल से ~~पर्यटकों के~~ आकर्षण का केन्द्र स्थल रही है। प्राकृतिक सौन्दर्य के अनुरूप ही यहां कई संस्कृतियों के समन्वय से एक विलक्षण संस्कृति का उन्मेष हुआ, जिसे आजकल "कश्मीरयत" की संज्ञा दी जाती है। प्राचीन काल में यहां आर्य संस्कृति (पुष्पित) व पल्लवित हुई और कई शताब्दियों तक यह शारदा (सरस्वती) की विलास भूमि और संस्कृत भाषा के अध्ययन एवं अध्यापन का प्रधान केन्द्र रही। ~~(शेष पृष्ठ ३ पर)~~

और यहां के आचार्यों ने न केवल संस्कृत साहित्य को ~~अपनी~~ अमूल्य रचनाएं ~~से विभूषित किया~~ दी अपितु ज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र — जैसे गणित, ज्योतिष, रसायनशास्त्र, आयुर्विज्ञान, व्याकरण, दर्शन, काव्य समीक्षा, कामशास्त्र, तन्त्रशास्त्र आदि-में अभूतपूर्व योगदान किया। // कश्मीर बौद्ध धर्म के सर्वास्तिवाद शाखा का भी मुख्य केन्द्र रहा जिसने बौद्ध-दर्शन की व्याख्या के लिए संस्कृत भाषा को माध्यम के रूप में चुना और इस भाषा में अमूल्य बौद्ध ग्रन्थों की रचना की। समय समय पर घाटी में अनेक बौद्ध विहारों का निर्माण हुआ जिनमें उष्कुर, परिहासपुर, कय्य, जयेन्द्र, मुंग-वि, अमृतभवन आदि विहार सुप्रसिद्ध थे और इन विहारों में प्रदान की जाने वाली बौद्ध-शिक्षा के स्तर की ह्यून-त्सांग, इ-त्सिंग, ओ-कांग आदि चीनी यात्रियों ने ~~भूरि-भूरि~~ पर्याप्त प्रशंसा की है। कश्मीर में अनेक विश्वप्रसिद्ध बौद्ध आचार्यों का जन्म हुआ जिन्होंने मध्य एशिया, चीन, जावा आदि देशों में बौद्ध मत का प्रचार किया और जिनके अनवरत ~~एवं~~ कठोर परिश्रम से भी ~~[illegible]~~ बौद्ध धर्म को समूचे एशिया का प्रधान धर्म बनाने में ~~[illegible]~~

संघदास मित्र, इन बौद्ध-आचार्यों में संघभद्र, स्थविल, बोधिल, संघभूति, गौतम संघ, पुण्यत्रात, धर्मयशस, बुद्धयशस, विमलाक्ष, बुद्धजीव, धर्ममित्र आदि उल्लेखनीय हैं। इन में अधिकांश ने चीन में रहकर अनेक बौद्ध-ग्रन्थों का संस्कृत से चीनी में अनुवाद किया। // कश्मीर 'प्रतिभिज्ञा दर्शन' के नाम से विख्यात अद्वैत शैव दर्शन का भी प्रधान केन्द्र रहा और इस का सूत्रपात महान शैवाचार्य वसुगुप्त ने किया और इस की व्याख्या, प्रसार एवं प्रचार में कल्लट, सोमानंद, उत्पलदेव, अभिनवगुप्त, क्षेमराज आदि शैवाचार्यों ने महान योगदान दिया। इस्लाम धर्म की ~~आगमन~~ स्थापना के अनन्तर कश्मीर में ही

इस्लामी सूफीमत ~~एवं~~ तथा अद्वैत शैव मत के समन्वय के परिणाम स्वरूप एक नयी सूफी काव्य-धारा का स्रोत फूट पड़ा, जो कई शताब्दियों तक कश्मीरी जनमानस को ~~आन्दोलित~~ प्रभावित ~~आन्दोलित~~ करता रहा। कश्मीर बौद्ध, हिन्दु और ~~मुस्लिम~~ इस्लामी स्थापत्य ~~कला~~ शैलियों का संगम माना जाता है। इन के समन्वय से ऐसी शिल्प ~~एवं~~ तथा स्थापत्य शैलियों का जन्म हुआ जिनके उदाहरण अन्यत्र दुर्लभ हैं। कश्मीर अपनी कलाओं और दस्तकारियों के लिए प्राचीन काल से ही प्रसिद्ध रहा है। कश्मीरी शाल, रेशम, कालीन, गब्बे, चांदी और तांबे के नक्काशी किए हुए बर्तन, लकड़ी और पेपियर मैशी की सजावट की अनुपम वस्तुएं, कशीदे का काम, मिट्टी के बर्तन आदि चीज़ें कश्मीरी दस्तकारों की ~~कला~~ ~~कुशल~~ अति निपुणता और अद्भुत कौशल का परिचय देती हैं।

नवीं शताब्दी के बाद का सम्पूर्ण कश्मीरी संस्कृत ~~एवं~~ तथा कश्मीरी साहित्य, कश्मीर की प्रमुख लिपि- शारदा-~~लिपि~~ में लिखा गया है। भारत की अन्य लिपियों की तरह शारदा लिपि भी ब्राह्मी लिपि से विकसित हुई और कई शताब्दियों तक कश्मीर के अतिरिक्त सम्पूर्ण उत्तर-पश्चिमी भारत, (पाकिस्तान सहित) और अफगानिस्तान की प्रमुख लिपि रही। इस लिपि में लिखित सहस्रों ग्रन्थ एवं ~~[illegible]~~ कई महत्वपूर्ण शिलालेख विश्व ~~के~~ के सुप्रसिद्ध पुस्तकालयों ~~एवं~~ तथा संग्रहालयों में सुरक्षित हैं। कश्मीर में इस लिपि का प्रयोग वर्तमान शताब्दि के प्रथम चरण तक होता रहा, जब उस का स्थान देवनागरी लिपि ने ले लिया। उल्लेखनीय बात यह है कि घाटी में ~~मुसलमान~~ मुस्लिम शासन की स्थापना के अनन्तर भी कई शताब्दियों तक इस लिपि का प्रयोग फारसी लिपि के साथ साथ राजकीय स्तर पर होता रहा।

संक्षिप्त इतिहास

Indus V. Civ. के अवशेष

बुर्जहोम आदि

Hakim Ref.

कश्मीर ~~को~~ के इतिहास पाषाण युग से ~~प्रारम्भ होता है और पाषाण युग से~~ सम्बन्धित पर्याप्त सामग्री भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण द्वारा किए गए अनुसन्धानों ~~एवं~~ तथा उत्खननों ~~के फलस्वरूप~~ से प्रकाश में आयी है किन्तु अभी तक इस का वैज्ञानिक ढंग से विश्लेषण ~~एवं~~ तथा प्रकाशन पुरातत्व विभाग द्वारा नहीं किया गया है। कश्मीर समूचे भारत का संभवतः एकमात्र राज्य है जिसके ऐतिहासिक काल का सम्पूर्ण विवरण प्राचीन काल से अब तक लिखित रूप में उपलब्ध है। लिखित सूत्रों में कल्हण पण्डित द्वारा रचित "राजतरङ्गिणी" प्रमुख है जिस को प्राचीन भारत का एकमात्र ऐतिहासिक ग्रन्थ ~~है~~ कहलाने का श्रेय प्राप्त है।

~~(शेष पृष्ठ 6 पर)~~

Brief Ethnic History | groups

~~संक्षिप्त इतिहास~~

कल्हण द्वारा प्रस्तुत विवरण से ज्ञात होता है कि सन् २१८० ई. पूर्व से पहले कश्मीर में कोई व्यवस्थित केन्द्रीय राजसत्ता नहीं थी और उसी समय दयाकरण नाम के व्यक्ति ने प्रथम बार कश्मीर की समूची घाटी को एक करके यहां एक केन्द्रीय राज्य सत्ता स्थापित की। महाभारत के युद्ध में कश्मीर ने कोई भाग नहीं लिया क्योंकि उस समय कश्मीर का राजा गोनन्द द्वितीय अल्प वयस्क था। अतः सहायता के लिए ओर न कौरवों ने और न पाण्डवों ने कोई प्रार्थना की। महाभारत काल से लेकर १४ वीं शताब्दी तक कश्मीर में हिन्दू राज्य, लगभग अविच्छिन्न रूप से चलता रहा और इस दीर्घ काल में कई मेधावी, पराक्रमी, कुशल, प्रजापालक तथा धार्मिक समभाव की नीति अपनाने वाले राजाओं ने कश्मीर में शासन किया। इन में अशोक (२७२-२३२ ई. पू.) कनिष्क (प्रथम एवं द्वितीय शताब्दी), विनयादित्य (७७६-७८० ई.), ललितादित्य मुक्तापीड (७२४-७५२ ई.), अवन्तिवर्मा (८५५-८८३ ई.) दिद्दा रानी (९८०-१००३ ई.), जयसिंह (११२८-११५५ ई.) उल्लेखनीय हैं। ~~भारत के सम्राट~~ अशोक और ~~कनिष्क कुषाण वंशी राजा~~ कनिष्क का विवरण कल्हण ने ऐसे प्रस्तुत किया है जैसे वे कश्मीर के स्थानीय शासक हों, यद्यपि कश्मीर उन के साम्राज्य का केवल एक छोटा सा भाग था। विनयादित्य अत्यन्त सरल, साधु प्रकृति का न्यायप्रिय राजा था जिसने अपने राज्य में असत्य भाषण, प्राणियों की हिंसा एवं किसी भी प्रकार के छलकपट को कठोर दण्डनीय अपराध घोषित किया। वह स्वयं खेती करता था और अन्य कृषकों की भांति उपज का

दसवाँ भाग राजकीय गोदाम में जमा करता था।
भूमिहीन निर्धन लोगों में राजकीय गोदामों से
अनाज वितरित करता था। ललितादित्य कश्मीर का
प्रथम पराक्रमी तथा प्रतापी राजा था, जिसने
विजयपताकायें कश्मीर की सीमाओं से बाहर,
तुर्किस्तान, मध्य-एशिया तथा तिब्बत में भी फहरायीं।
उस के द्वारा निर्मित परिहासपुर के चैत्य एवं मठ, और
मार्तण्ड का प्रख्यात सूर्य मन्दिर कश्मीर के प्राचीन
स्मारकों में सर्वश्रेष्ठ हैं। खण्डहर अवस्था में भी
भव्य दिखने वाले और कला की दृष्टि से अनुपम
ये स्मारक ललितादित्य के वैभव एवं कलाप्रियता
के जीते जागते उदाहरण हैं। अवन्तिवर्मा को
जनहित के लिए किए गए स्थायी एवं
योजनाबद्ध कार्यों के लिए आज
भी स्मरण किया जाता है। वितस्ता नदी के जल के
नियमन के लिए किये गए कारगर उपायों से
उसने कश्मीर को, सदा के लिए बाढ़ अभिशाप निरन्तर
बाढ़ से मुक्ति दिलायी।
अवन्तिपुर में उसके द्वारा निर्मित
अवन्तिस्वामी एवं अवन्तीश्वर के मन्दिरों के अवशेष
कश्मीरी स्थापत्य का सर्वश्रेष्ठ नमूना प्रस्तुत करते हैं।
दिद्दा रानी महिला होते हुए भी अतीव कुशल
शासक सिद्ध हुई जिसने अराजकता, विद्रोह एवं
षड्यन्त्रों से दूषित वातावरण में शासन की बाग-
डोर अपने हाथों में लेकर
सुदृढ़ शासन व्यवस्था
करके कश्मीर में लम्बे समय से लुप्त शांति,
तथा समृद्धि का राज्य स्थापित किया। जिस
समय सिंहासन को केवल कुछ दिनों के लिए संभालना
असम्भव प्रतीत होता था, उस समय दिद्दा रानी ने पूरे
50 वर्ष तक राज्य करके अपनी गहन शासन
प्रतिभा कुशलता का परिचय दिया। जयसिंह अत्यन्त
विनम्र राजा था।

अपघातों और मुठभेड़ों ने उनके जीवन में पुनः बहार लायी।

मुस्लिम शासन की स्थापना

चौदहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में कश्मीर में मुस्लिम शासन की स्थापना हुई। कश्मीर में मुसलमान शासन की स्थापना अपने यह एक रोचक घटना है। चौदहवीं शताब्दी के आरम्भ में सुहदेव नाम के राजा कश्मीर के सिंहासन पर आरूढ़ थे। 1319-20 ई० में मंगोलों ने डुलुच के नेतृत्व में कश्मीर पर आक्रमण किया। सुहदेव शत्रु का सामना करने के बजाय पहाड़ों को पार कर किश्तवाड़ भाग गया। कुछ ही समय पूर्व रिंचन नाम के तिब्बती राजकुमार ने पिता से किसी बात पर झगड़ के बाद भाग कर कश्मीर में शरण ली थी। सुहदेव के पलायन करने पर रिंचन ने डट कर मंगोलों का सामना किया और उन्हें कश्मीर की पश्चिमी सीमा के बाहर खदेड़ कर कश्मीरियों को उनके लूट मार और अत्याचारों से बचा लिया। सुहदेव के पलायन करने पर उसका प्रधान मंत्री रामचन्द्र सिंहासन पर बैठा पर रिंचन ने उसकी हत्या करके राजगद्दी पर कब्जा कर लिया और रामचन्द्र की बेटी कोटारानी से विवाह किया। रिंचन जन्म से बौद्ध था पर कश्मीर का राज्य पाकर उसने हिन्दु धर्म में दीक्षा लेनी चाही। पर धर्म के विषय में संकीर्ण दृष्टिकोण रखने वाले तत्कालीन शैवाचार्य देवस्वामी ने इस का विरोध किया और रिंचन को हिन्दू-धर्म में प्रवेश करने की अनुमति नहीं दी। उन्हीं दिनों बुलबुल शाह नाम का प्रचारक इस्लाम धर्म के प्रचार के लिए घाटी में आया हुआ था। उसने स्थिति का लाभ उठाते हुए

इस्लाम

रिंचन को ~~मुसलमान~~ धर्म में दीक्षा लेने के लिए प्रेरित किया। इस प्रकार रिंचन ने ~~मुसलमान धर्म~~ इस्लाम स्वीकार किया और सदर-उद्-दीन नाम से कश्मीर का प्रथम मुसलमान शासक बना। पर रिंचन अधिक समय तक जीवित नहीं रहा और तीन वर्ष के अल्पकालीन शासन के अनन्तर ~~कश्मीर की~~ ~~अन्य महिला राजकुमारी~~ कोटारानी ने हिन्दु राज्य की पुनर्स्थापना के लिए सफल प्रयास किया और स्वयं राजगद्दी भी संभाली ~~थी~~। रिंचन की तरह एक अन्य शरणार्थी शाहमीर, ने भी कश्मीर में शरण ली थी और उदयनदेव के दरबार में कर्मचारी बना था। कोटारानी के विरुद्ध षडयन्त्र करके उसने सिंहासन पर कोटारानी की अनुपस्थिति में कब्ज़ा कर लिया और कोटारानी को अन्दरकोट के किले में ~~उसने~~ को बन्दी बना लिया। कोटारानी ने, शाहमीर से अपने ~~सम्मान~~ सतीत्व की रक्षा हेतु आत्महत्या कर ली और इस प्रकार हिन्दु राज्य की समाप्ति हुई और कश्मीर की राजसत्ता ~~मुसलमानों~~ इस्लाम को मानने वाले शासकों के हाथ में चली गई।

कोटा देवी से सिंहासन छीनकर सन् १३३९ ई० में शाहमीर शमसुद्दीन के नाम से सिंहासन पर बैठा। उसके वंश में शहाबुद्दीन, सिकन्दर बुतशिकन आदि महत्वपूर्ण सुलतान हुए। शहाबुद्दीन (१३५५-१३७४ ई०) ने अपने सैनिक अभियानों से ललितादित्य के विजय-अभियानों की स्मृति पुनर्जीवित की। ~~अतः~~ कल्हण के ~~अतिरिक्त~~ अनन्तर 'द्वितीय राजतरंगिणी' के रचयिता जोनराज के अनुसार शहाबुद्दीन ने उद्भाण्डपुर (वर्तमान ओहिन्द), सिन्धु (सिन्ध), गान्धार (उत्तर-पश्चिम पाकिस्तान), गज़नी, नगरगृहार (जलालाबाद), हिन्दुकोश (हिन्दुकुश), सुशर्मपुर (कांगड़ा), ~~स~~ शतद्रु (सतलुज), ~~उस~~ मोह देश (लद्दाख) आदि प्रदेशों एव नगरों में अपनी

12 16

शाहबुद्दी
या शाहबुद्दीन ✓

विजयपताकायें फहरा दीं। अपनी धार्मिक सहिष्णुता के कारण शाहबुद्दीन और मुस्लिमों में भी लोकप्रिय था। उस के समय के एक संस्कृत अभिलेख में उसे "पाण्डववंशज" पाण्डवों का वंशज कहा गया है। सुल्तान सिकन्दर (१३६०-१४१४ ई०) प्रारम्भ में अपने पूर्वजों की ही नीतियों का अनुसरण करता रहा पर बाद में विदेशी मुल्लाओं के प्रभाव में उस ने धर्मान्धता एवं कट्टरता का मार्ग ग्रहण किया। उसने हिन्दुओं को 'मृत्यु अथवा धर्मान्तरण' में एक को चुनने के लिए विवश किया। कला की दृष्टि से अनुपम मन्दिरों और मूर्तियों को नष्ट कर दिया। मन्दिरों में ललितादित्य द्वारा निर्मित मार्तण्ड का सूर्य मन्दिर तथा अवन्तिवर्मा द्वारा स्थापित अवन्तिस्वामी एवं अवन्तीश्वर के मन्दिर भी सम्मिलित थे। मुस्लिम इतिहासकारों ने इन्हीं कारनामों के कारण सिकन्दर को बुत-शिकन (मूर्तिभञ्जक) कहा।

सिकन्दर 'बुतशिकन' के अत्याचारों के कारण कश्मीरी जनता में राज्य के विरुद्ध घृणा उत्पन्न हो गयी। फलतः सिकन्दर के पुत्र जैनुलाबिदीन (१४२२-१४७२ ई०) जब सिंहासन पर बैठा तो उसे कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ा। कहा जाता है कि उसके शरीर पर एक फोड़ा निकला पर कोई वैद्य या हकीम उपचार के लिए तैयार नहीं हुआ। अन्त में वैद्य श्रीभट्ट अथवा सूर्यभट्ट ने सुल्तान का इलाज किया और वह स्वस्थ हो गया। अतः आभार प्रदर्शन हेतु सुल्तान ने श्रीभट्ट को प्रधान न्यायाधीश और सर्वोच्च खजान्ची

नियुक्त किया। श्रीभट्ट के प्रभाव में आकर जैनुल-आबिदीन ने पिता सिकन्दर के कट्टरपन्थी मार्ग को और परम्परागत धार्मिक समभाव का मार्ग चुना एक धार्मिक सहिष्णुता की नीति से ग़ैर मुस्लिमों की दशा में आशातीत सुधार हुआ। हिन्दुओं के पूजा-स्थल एवं धर्मग्रन्थों को नष्ट करने की क्रिया तुरंत बन्द कर दी गई। दाह कर्म पर लगाई गई रोक हटा दी गई और हिन्दुओं को जज़िया जैसे घृणित कर से मुक्ति प्रदान की गई। जो हिन्दु देश छोड़ कर भाग गए थे उन्हें पुनः सम्मानपूर्वक बुलाया गया और उनको सम्पत्ति उन्हें वापिस दिलाई गई।

सुलतान ने सिकन्दर और उसके भाई अलीशाह द्वारा हिन्दु-जनता के हृदय में लगाए गए घावों को ही नहीं भरा अपितु जनता की सुख समृद्धि के लिए उसने समूची शासन व्यवस्था को नये सिरे से संगठित किया और सामाजिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था के प्रत्येक क्षेत्र में उपयोगी सुधार किये। कैदियों को उपयोगी नागरिक बनाने की चेष्टा से जेलों में उद्योग आरम्भ कराये। कृषि के क्षेत्र में भी अनेक सुधार किए। भूमिकर की उचित दर नियत की, आयातित वस्तुओं के मूल्य निर्धारित किए और ऊसर पड़ी हुई भूमि की स्थायी सिंचाई के लिए नयी नहरें खुदवायी। राज्य की आय बढ़ाने के लिए उसने तांबे की खानों की खुदाई शुरु करवाई और लद्दाख की नदियों से सोना निकालने के लिए उचित प्रबन्ध किया। देशी, शिल्प कलाओं की प्रगति में भी उसने सराहनीय योगदान दिया। इन्हें अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर लाने के लिए उसने ईरान और मध्य एशिया से कुशल शिल्पकार मंगवाये।

विद्वान

सुलतान स्वयं विद्याव्यसनी था और बिना धार्मिक भेदभाव के विद्वानों का सम्मान करता था। श्रीभट्ट के अतिरिक्त गैर-मुस्लिम (बौद्ध) तिलकाचार्य उसका प्रधान मन्त्री था। कई कश्मीरी विद्वानों से उसका दरबार अलङ्कृत था। इनमें ऐतिहासकार जोनराज और श्रीवर, ज्योतिषी रूपभट्ट, व्याकरणाचार्य रामानन्द, अथर्ववेद के अध्येता युद्धभट्ट आदि प्रमुख थे। संस्कृत के साथ साथ फारसी भाषा और साहित्य का भी उचित विकास हुआ। स्वयं सुलतान ने संस्कृत के अनेक महत्वपूर्ण ग्रन्थों का फारसी में अनुवाद किया करवाया। कश्मीरी-भाषा के साहित्य को भी प्रोत्साहन मिला। उत्तसोम और युद्धभट्ट ने कश्मीरी में सुल्तान की जीवनी लिखी और भट्टावतार ने शाहनामा के ढंग पर जैनविलास लिखा।

सुल्तान जैनुलाब्दीन अत्यन्त चरित्रवान व्यक्ति था। जहां उसके पितामह कुतुबुद्दीन ने मौलवियों के प्रभाव में आकर अपनी दो हिन्दु स्त्रियों में एक का परित्याग किया क्योंकि वह सगी बहिनें थीं, वहां जैनुलाब्दीन ने एक ही स्त्री से विवाह किया और एकपत्नीव्रत का आदर्श प्रस्तुत किया। सुल्तान के जीवन के अन्तिम दिन निराशा की अवस्था में व्यतीत हुए। उसके पुत्र आपस में लड़कर उसके सारे पुनीत उपयोगी एवं जनहितकारी कार्यों को मिट्टी में मिला रहे थे। अन्तिम क्षणों में वह श्रीवर के मुख से मोक्षोपाय के श्लोक सुनता रहा। जनकल्याणकारी नीतियों, ~~[illegible]~~ धार्मिक उदारता एवं समुची जनता में सर्वाधिक लोकप्रियता के कारण सुल्तान को बडशाह (महान राजा) के नाम से ~~[illegible]~~ आज भी याद किया जाता है।

सुल्तान जैनुलाब्दीन के पश्चात् अगली एक शताब्दी तक शासन व्यवस्था अस्त व्यस्त रही। मुहम्मद शाह के राजत्वकाल (~~1484~~ १४८४ - १५२८ ई०) में

1. एक उल्लेखनीय घटना घटी। स्थानीय कश्मीरी जनता में देश-भक्ति की भावना जाग्रत हो गई थी। विदेशी सईदों के अत्याचारों से वह तंग आ गई थी। सुल्तानों को अपने प्रभाव में लाकर इन्होंने परम्परागत धार्मिक सहिष्णुता की भावना को नष्ट कर दिया था और उच्च पदों पर अपने प्रतिनिधियों को नियुक्त करवाया था। फलतः कश्मीरी जनता ने विद्रोह किया और सईदों तथा कश्मीरियों के बीच युद्ध छिड़ गया। इस का विवरण श्रीवर ने अपनी राजतरङ्गिणी में दिया है और इस का संकेत मुहम्मद शाह के समकालीन एक अभिलेख में भी उपलब्ध होता है जो श्रीनगर में एक कब्र पर संस्कृत एवं फारसी दोनों भाषाओं में उत्कीर्ण किया गया है और जिसकी तिथि ६ जुलाई १४८४ ई० है। इस युद्ध में कश्मीरियों की विजय हुई और सईदों को पहली बार पराजय का सामना करना पड़ा।

date

आगामी वर्षों में विभिन्न राजनीतिक गुटों, जिनमें विदेशी और स्थानीय सईद, माग्रे, चक और डार प्रमुख थे, सत्ता के लिए संघर्ष होता रहा और उस में कभी एक गुट सत्ता को हथियाने में सफल होता तो कभी दूसरा। इसी अनिश्चित, अस्थिर एवं अव्यवस्थित राजनीतिक वातावरण में कश्मीर का शासन, मुगल शासक हुमायूँ के सरदार मिर्ज़ा हैदर दुगलत के हाथ में आ गया। १५४० ई० में कन्नौज के युद्ध में शेरशाह से पराजित होकर जब हुमायूँ की सेना पलायन कर रही थी तो हुमायूँ के एक सरदार मिरज़ा हैदर दुगलत केवल ४०० सैनिकों के साथ कश्मीर में प्रविष्ट हुआ। यहां माग्रे एवं सईद गुटों ने उसे राजगद्दी पर नियन्त्रण पाने के लिए सहायता की और वह १५४१ में कश्मीर के सिंहासन पर आरूढ़ होने में सफल हुआ। मिर्ज़ा दुगलत कुशल शासक सिद्ध हुआ। उसने ज़ैनुलाब्दीन द्वारा प्रवर्तित पर उसकी

Muslim/Non-muslim

clear

मृत्यु के बाद अवरुद्ध जनहित के विकास कार्यों को पुनर्जीवित किया और देश में कुछ समय के लिए शांति एवं समृद्धि का वातावरण फिर से बहाल हो गया। शिल्पकलाओं को विशेष प्रोत्साहन मिला और शाल उद्योग में अभूतपूर्व प्रगति हुई। पर शांति अधिक देर तक ~~स्थिर~~ न रह सकी। मिर्ज़ा दुगलात ने सभी उच्च पदों पर ~~मुगल~~ अपने साथियों को नियुक्त किया था। इससे नाईक और मागरे जिन्होंने कश्मीर का राज्य अधिगत करने में उन की सहायता की थी, रुष्ट हुए और उन्होंने विद्रोह किया। अवसर पाकर उन्होंने 1551 ई० में मिर्ज़ा की हत्या कर डाली। इस नृशंस हत्या के उपरान्त राजनीतिक वातावरण पुनः अव्यवस्थित हो गया और सत्ता के लिए विविध गुटों में पुनः संघर्ष छिड़ गया। इस संघर्ष में इस बार शिया मतावलम्बी चक विजयी हुए और सन् 1586 ई० तक शासन की बागडोर उनके हाथों में रही पर वे इस प्रशासन में व्यवस्था स्थापित करने में असफल रहे और राजनीतिक वातावरण गुटों के पारस्परिक संघर्ष से संतप्त रहा। इन्हीं चक सुल्तानों में एक सुल्तान युसुफ शाह थे, जिनका एक ग्रामीण अबोध सुकुमारी हब्बा खातून के साथ प्रणय प्रसङ्ग कश्मीरी लोकसाहित्य की महत्वपूर्ण थाती है और जूनजान कवयित्री हब्बा खातून (जिनका प्रारम्भिक नाम जून अर्थात चाँद था) के कश्मीरी भाषा में रचे गए प्रेम गीत कश्मीरी काव्य की अमूल्य निधि है। इन गीतों में सजीले सपनों की महक और प्रेम की तृप्ति एवं उल्लास की मधुर अभिव्यक्ति है। चक शासन अधिक देर तक टिक न सका। सुन्नी सम्प्रदाय चकों के शिया शासन के विरोध में विद्रोह कर बैठा और इसी सम्प्रदाय के प्रतिनिधियों के अनुरोध पर

अक्टूबर १४, १५८६ में मुगल सेना कश्मीर में प्रविष्ट हुई और बिना किसी विरोध के कश्मीर में मुगलों की सत्ता स्थापित हो गई। मुगलों द्वारा सत्ता संभालने के साथ ही कश्मीर में क्षेत्रीय शासन को भी अन्त हुआ। इसे पुनः स्थापित करने के लिए कश्मीरी जनता को १९४८ ई० तक की शताब्दियों की लम्बी अवधि की प्रतीक्षा करनी पड़ी।

कश्मीर में मुगल राज्य

सन् १५८६ ई० में कश्मीर मुगल साम्राज्य का एक प्रान्त बन गया और इस प्रकार शताब्दियों के एकाकीपन को त्याग कर भारतीय मुख्य धारा में प्रविष्ट हुआ। मुगल शासकों ने कश्मीर में शासन व्यवस्था को सुचारु रूप से चलाने के लिए योग्य एवं कुशल सूबेदार (गवर्नर) भेजे और इन के प्रयत्नों के फलस्वरूप कई शताब्दियों के उपरान्त कश्मीर में पुनः शांति एवं समृद्धि के युग का सूत्रपात हुआ। कश्मीर की शासन प्रणाली को मुगल पद्धति के अनुरूप बनाया गया और भूमि सम्बन्धी व्यवस्था में उचित परिवर्तन किये गए। अकबर के प्रधान इंजीनियर मुहम्मद कासिम खाँ ने गुजरात, भिम्बर, राजौरी और पुंछियान के मार्ग से एक विशाल राज-मार्ग बनवाया जिससे यातायात में अभूतपूर्व प्रगति हुई। अनावृष्टि, अतिवृष्टि एवं बाढ़ के कारण अगणित बार कश्मीरियों को अकाल का सामना करना पड़ता था जिस कारण जनसंख्या का एक भारी भाग काल का ग्रास हो जाता था पर अब कश्मीरियों को इस यातना से मुक्ति मिली। जब कभी घाटी में धान की कमी या अकाल की स्थिति उत्पन्न हो जाती, जैसे १६६३ में हुई तुरंत पंजाब तथा देश के अन्य भागों से अनाज कश्मीर

…ीनियरी
…श्यकता
…नी थी में
…आवश्यकता थी

भेजा जाता और इस प्रकार दुर्भिक्ष काश्मीरी जनता को अकाल का सामना नहीं करना पड़ता था। अकबर, जो कश्मीर को व्यक्तिगत उपवन समझते थे तीन बार कश्मीर आया। उसने हिन्दुओं पर लगे 'मुण्ड-कर' को रद्द कर दिया। उनकी ज़मीनें वापस करा दीं और यहां पर इस्तमरारी बन्दोबस्त कराया। ~~हारी पर्वत किला~~ अभावग्रस्त कश्मीरियों की आर्थिक ~~स~~ स्थिति सुधारने के लिए उसने हारी पर्वत किले के चारों ओर फसील का निर्माण कराया जिससे सैकड़ों कश्मीरियों को रोज़गार मिला और भुखमरी से मुक्ति मिली।

मुगल शासकों का प्रकृति प्रेम ~~विख्यात~~ प्रसिद्ध है। कश्मीर की मोहक एवं अनुपम छटा ने प्रकृति प्रेमी जहांगीर, नूरजहां तथा शाहजहां का मन मोह लिया और उन्होंने कश्मीर को मुगल-साम्राज्य का विलास उपवन बना दिया। राजकार्य से ऊब कर प्रकृति की शांत एवं रमणीय वातावरण में अपने मन को आह्लादित करने के लिए वे बार बार कश्मीर आये और यहां के प्राकृतिक सौन्दर्य को एक नया मोहक रूप प्रदान करने के लिए उन्होंने कई उद्यानों का निर्माण करवाया। ~~[illegible] भी उनके अमर प्रकृति प्रेम के स्मृति चिह्नों के रूप में कश्मीर में प्राकृतिक सौन्दर्य को चार [illegible]~~ हैं।

औरंगज़ेब (१६५८-१७०७ ई०) के बाद कश्मीर पर मुगल शासन के नियन्त्रण में शिथिलता आ गई। राजनीतिक कारणों ने मुगल सूबेदारों को राजधानी दिल्ली में ही व्यक्तिगत रूप से उपस्थित रहने के लिए विवश किया। शासन चलाने के लिए उन्होंने अपने प्रतिनिधि कश्मीर भेजे, जो ~~[illegible]~~ अयोग्य सिद्ध हुए ~~[illegible]~~ जिन्होंने अपने जन विरोधी कार्य कलापों से जनमानस से मुगल शासन की अपार स्मृति ही ~~छिन्न भिन्न कर दी~~ छीन ली।

उनकी हिन्दुओं के प्रति संकीर्ण एवं अत्याचारी नीतियों ने कश्मीरी ब्राह्मणों को नवें सिखगुरु तेग बहादुर के पास सहायतार्थ जाने के लिए विवश किया। कश्मीरियों के कल्याण के लिए गुरु तेग बहादुर का बलिदान कश्मीरी एवं भारतीय इतिहास की एक अविस्मरणीय घटना है।

कश्मीर में अफगान शासन (१७५३ से १८१९ ई०)

स्थानीय शासकों के कुशासन एवं जर्जर आर्थिक परिस्थिति ने जैसे कश्मीरियों को शासन में सुधार और यातनाओं से मुक्ति पाने के लिए मुगलों की शरण लेने के लिए विवश किया था वैसे ही मुगल साम्राज्य के अवनति पराभव काल के भ्रष्ट, अत्याचारी और धनलोलुप सूबेदारों के अत्याचारों से मुक्ति प्राप्त करने के लिए उन्हें एक बार फिर एक विदेशी शासक से सहायता लेने के लिए बाध्य होना पड़ा। यह विदेशी शासक अफगानिस्तान का सुल्तान अहमदशाह अब्दाली था। अफगान शासक ने सन् १७५३ अब्दुल्ला खां इस्क अकासी के नेतृत्व में कश्मीर में सेना भेजी। अफगान सेनापति ने अधिक विरोध का सामना न करते हुए बिना कठिनाई के स्थानीय शासक अब्दुल कासिम खां को पराजित कर कश्मीर में अफगान शासन की स्थापना की।

कश्मीर के अफगान शासन की स्थापना से यह आशा जगी थी कि एक बार फिर मुगल सम्राटों का पुनः शांति एवं समृद्धि का युग लौट आयेगा। पर कुछ ही दिनों में कश्मीरियों को अपनी भयंकर भूल पर पश्चाताप करना पड़ा। अफगान सूबेदार शासन-व्यवस्था को सुधारने के बजाय लूट खसूट में व्यस्त रहे। उन्होंने दूसरी जनता पर

गए

नृशंस अत्याचार किए ~~और उन की मान~~
~~मर्यादा पर विविध प्रहार किए~~। आततायी
एवं वासना के भूखे अफगान सरदारों से
अपनी अबोध लड़कियों को बलात्कार से
बचाने के लिए ~~[illegible]~~ ~~उन~~ उनके सुन्दर चेहरों को
झुलसा कर कुरूप बनाने और उन्हें ~~बाल्य~~
बाल्यावस्था में ही विवाह के सूत्र में
बांधने के लिए कश्मीरी ~~[illegible]~~ समाज विवश हो गया।
अपने अंगों को अफगानों की भूखी नज़रों
से बचाने के लिए हिन्दू स्त्रियों ने साड़ी का
परित्याग कर एक नए आकार का आवरण
(फिरन) धारण किया जिससे सिर से लेकर
एड़ी तक शरीर आवृत रहता था।

सन् 1683 ई० में ईस्ट इंडिया कम्पनी
के एक अधिकारी जार्ज फास्टर ने कश्मीर
की यात्रा की। अफगान सूबेदारों के अत्याचारी
शासन का वर्णन करते हुए उन्होंने लिखा है
कि कैसे साधारण अपराधों के कारण
कश्मीरियों को एक दूसरे के साथ बांध
कर नदी में फेंक दिया जाता था और
स्त्रियों पर खुले आम बलात्कार किया
जाता था। पर फास्टर ने अपनी दुर्गति
के लिए कश्मीरियों को भी ~~जिम्मेदार~~
~~है और~~ दोषी ठहराया है और उनके
नेताओं की उनके कुकृत्यों एवं दुराचरणों
के लिए ~~उनकी~~ भर्त्सना की है। अंग्रेज़
सैनिक हारेंस ने इस काल का विवरण
देते हुए लिखा है कि वह ~~a~~ क्रूरता, नृशंसता,
और निरंकुशता का युग था। चारों ओर
अराजकता फैली हुई थी।

अफगान सूबेदारों में दो सूबेदारों को
आज भी याद किया जाता है। यह है अमीर

(Margin notes: को / और भी / (लड़कों) — फारसी / सूफी / [illegible])

खान और जब्बार खान। श्रीनगर के प्रसिद्ध सात पुलों में प्रथम पुल का निर्माण अमीर खान के शासनकाल में हुआ और इसी के नाम पर इसको अमीराकदल नाम आज भी प्रचलित है। श्रीनगर में ही प्रसिद्ध महल शेरगढ़ी (वर्तमान पुराना सचिवालय) का निर्माण भी उसी समय हुआ और उस तथा आँचार झीलों को मिलाने वाली एक नहर का भी निर्माण किया गया जो आज भी नाल-ए-अमीरखान के नाम से प्रसिद्ध है। इस नहर का निर्माण डल झील के समय उस झील के पानी को नियन्त्रित करने के लिए किया गया।

जब्बार खां अन्तिम अफगान गवर्नर था। उसने हिन्दुओं के धर्म एवं रीति रिवाजों पर क्रूर प्रहार किए। शीत ऋतु में मनाये जाने वाले शिवरात्रि के त्यौहार पर प्रायः हिमपात होता था और यह शुभ शकुन माना जाता था। हिन्दुओं को प्रताडित करने के लिए उसने शीत ऋतु में शिवरात्रि का त्यौहार मनाने पर पाबन्दी लगा दी और आदेश दिया कि इसे ग्रीष्म ऋतु में आषाढ ~~के मास~~ में मनाया जाय। उद्देश्य हिन्दुओं की ~~धर्म के प्रति~~ आस्था पर प्रहार करना था क्योंकि आषाढ मास में शिव रात्रि के लिए शुभ माने जाने वाले हिमपात का होना असम्भव था। कहा जाता है कि आषाढ मास में जब हिन्दू शिवरात्रि की पूजा कर रहे थे अचानक आकाश मेघों से आच्छन्न हो गया और पहिले वर्षा तदनन्तर हिमपात हुआ। तभी से कश्मीरी हिन्दू जनता में यह लोकोक्ति प्रसिद्ध है-

वुछि लोन यि जबार जन्द,
हारस ति कोरुन वन्द्य।

*इस नीच जब्बार खां को देखो जिसने आषाढ मास (ग्रीष्म ऋतु) को भी शीत ऋतु में परिवर्तित कर दिया"

कश्मीरी ब्राह्मण शिक्षित एवं मेधावी होने के कारण राजतन्त्र में प्राचीनकाल से ही सिद्ध हस्त थे। कश्मीर के सुल्तानों के ~~शासन के~~ और फिर मुगल शासन के दौरान भी अनेक कश्मीरी ब्राह्मण फारसी भाषा में विद्वत्ता प्राप्त कर

महत्वपूर्ण पदों पर आसीन रहे और घाटी में प्रशासन को सुव्यवस्थित करने तथा राज्य में शांति एवं समृद्धि स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। अफगान राज्य में भी अफगान सूबेदारों को प्रशासनिक कार्यकलाप में उनकी सहायता लेनी पड़ी। फलत: कई ब्राह्मण उच्च पदों पर प्रतिष्ठित हुए। राजा सुखजीवन सन् १७७५ई० में कश्मीर का गवर्नर बना, पंडित नंदराम टिक्कू काबुल का प्रधान मन्त्री बना, दिलाराम कुली और जयराम भान को दीवान बनाया गया।

अफगानों के ही शासनकाल में कश्मीर की एक प्रसिद्ध हिन्दू कवयित्री अरणि-माल (सन् १७३७-८०ई०) का जन्म हुआ। जब बर्बर अफगान आक्रान्ता घाटी को रौंद रहे थे, यह कवयित्री कोमल गीतों की रचना कर रही थी। अरणिमाल के पति मुंशी भवानी प्रसाद काचरू फारसी के श्रेष्ठ कवि थे और अफगान राज्य दरबार में उच्च पद पर आसीन थे। संभवत: दरबार की विलासिता के चकाचौंध से आक्रांत भवानी प्रसाद के नेत्र अरणिमाल के सहज, सुकुमार ग्रामीण सौन्दर्य की गरिमा पहचान न सके अत: विवाह के कुछ ही समय उपरान्त उसने अरणि-माल का परित्याग किया। पति को अपने प्रेम और अबोध सौन्दर्य के पाश में आबद्ध करने के लिए अरणिमाल ने अनेक प्रयत्न किये, विलासी स्त्रियों की जीवनपद्धति को अपनाने का प्रयास किया, दरबारी नाज़ नखरे सीखे, संगीत सीखा लेकिन सब व्यर्थ। पति को रिझाने में जब सब प्रयत्न विफल हुए तो अपनी दर्द एवं पीड़ा को व्यक्त करने के लिए कविता का आश्रय लिया और ऐसे प्रेम गीतों की रचना की जिनमें प्रेम की तृषा और तड़प की दर्दभरी अभिव्यक्ति है। सारा जीवन पति की राह ताकती रही और पति की प्रतीक्षा में ही ४२ वर्ष की अल्पायु में

परलोक सिधारी। भवानी प्रसाद आये अवश्य पर तब बहुत देर हो चुकी थी। वे केवल पत्नी के शव को ही देख सके।

अरनिमाल के काव्य की वेदना, मार्मिकता एवं सहज सौन्दर्य ने कश्मीरी जनमानस को आलोकित किया है और उसके गीतों की लय कश्मीर के सभी नर नारियों के होठों पर आज भी थिरकती है। विछोह की वेदना इन पंक्तियों में कैसी मुखरित हो उठी है -

अरनि रंग गोम श्रावन ~~ह~~ ह्योये,
कर यिये दरशुन दिये।
(~~पति वियोग में~~) सावन की चमेली सी मैं (पतिवियोग में) अरनि कली की तरह पियराई हूँ। न जाने वह कब आयेंगे और मुझे दर्शन देंगे।)

इस प्रकार अत्याचार एवं आतङ्क के वातावरण में भी हब्बाखातून (जिसका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है) और अरनिमाल के प्रेम गीतों की सरस धारा कश्मीरी जनमानस को अभिषिक्त करती रही ~~और घावों पर चन्दन का लेप लगाती रही~~।

अफगानों के ~~दिन प्रतिदिन हो रहे नृशंस एवं~~ बर्बर अत्याचारों को अधिक सहन करना जब असम्भव ~~कठिन~~ हो गया तो एक प्रभावशाली कश्मीरी ब्राह्मण बीरबल दर ने पंजाब के राजा रणजीतसिंह के दरबार में जाकर ~~अफ~~ कश्मीर में अफगान शासन का उन्मूलन कर सिख स्वयं का शासन स्थापित करने का अनुरोध किया। महाराजा रणजीतसिंह ने चिदीव चन्द के नेतृत्व में कश्मीर में सेना भेजी जिसने जब्बार खां को १५ जुलाई १८१९ में शोपयान के स्थान पर पराजित किया और इस प्रकार कश्मीर में अफगानों के ६७ वर्षीय ~~नृशंस, क्रूर एवं~~ बर्बर शासन का अन्त हुआ।

कश्मीर में सिख शासन

कश्मीर में सिख शासन १८१९-१८४६ अर्थात २६ वर्ष तक रहा। इस बीच शासन की बागडोर लाहौर दरबार द्वारा नियुक्त १० गवर्नरों के हाथ में रही। इन में से अधिकांश विलासप्रिय और जन हित के कार्यों में अधिकरुचि न लेने वाले ही थे। कुछ गवर्नरों ने जिनमें दीवान किरपा राम और कर्नल मिहान सिंह प्रमुख थे जन कल्याण के कई कार्य किये और इस प्रकार स्थानीय लोगों का मन जीत लिया। सन १८३२ के अकाल के बाद अनाज के अभाव में कश्मीरी मृत्यु के कगार पर खड़े थे तो कर्नल महान सिंह ने पंजाब से अनाज मंगवाया और इस प्रकार कश्मीरियों के प्राणों की रक्षा की। उसने करों में भी विशेष छूट देनी की घोषणा की। किरपा राम राजकार्यों में व्यस्त रहने के बावजूद कश्मीर की मोहक छटा का आनन्द लूटने के लिये समय निकालता था और डल झील में किश्ती में बैठकर विहार करता था जिसे कश्मीरी गायिकाएं एवं नर्तकियां खेती थीं। एक सिख गवर्नर मोती राम ने पूरे राज्य में गोहत्या प्रतिबंधित की। कुल मिलाकर सिख राज्य में हिन्दुओं को कुछ राहत मिली और उन्हें पुनः पूजा पाठ तथा रीति रिवाजों को मनाने की पूर्ण स्वतन्त्रता मिली। उन के जिन मन्दिरों को गिरा कर उनके स्थान पर मस्जिदों का निर्माण किया गया था, उनके पुनरुद्धार की योजना बनायी गयी पर हिन्दुओं ने मस्जिदें गिराने का कठोर विरोध किया और उन के प्रयत्नों से हिन्दू मन्दिरों के ध्वंसावशेषों पर निर्मित श्रीनगर की जामा मस्जिद एवं खानकाहि मौला जैसी महत्वपूर्ण मस्जिदें ध्वस्त होने से बच गई।

आर्थिक स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ क्योंकि अफगान सूबेदारों की तरह

सिख गवर्नर भी राज्य को लूट कर लाहौर के राजकीय कोष को ही भरने में लगे रहे। लोगों की आर्थिक दशा लूट खसूट और भारी करों के भारी बोझ से इतनी शोचनीय हो गई कि जहां प्रथम गवर्नर ने सिख दरबार के लिए 62 लाख रुपयों की पूंजी लाहौर भेजी वहां अन्तिम गवर्नर केवल 10 लाख रुपए ही एतदर्थ ~~भेज~~ बटोर पाया।

खसोट

कश्मीर में सिख शासन 1846 ई० तक रहा तथा उसके अनन्तर घाटी में जम्मू के डोगरों का शासन स्थापित हो गया। कश्मीर में डोगरा शासन की स्थापना कैसे हुई यह जानने से पहले हम जम्मू कश्मीर राज्य के दूसरे महत्वपूर्ण भाग जम्मू के इतिहास का सिंहावलोकन करेंगे।

जम्मू प्रदेश

जम्मू का प्राचीन इतिहास अभी भी अन्धकार के गर्भ में विलीन है यद्यपि प्रागैतिहासिक काल के कुछ अवशेष जम्मू के कई स्थानों से प्राप्त हुए हैं। जम्मू का प्राचीन नाम दुर्गर देश था जिसका उल्लेख चम्बा (हिमाचल प्रदेश) के राजा सोमवर्मन एवं आसटदेव के ग्यारहवीं शताब्दी के ताम्रलेखों में किया गया है। इन ताम्रलेखों में ~~वर्तमान~~ चम्बा राज्य के संस्थापक राजा साहिल्लवर्मी (दसवीं शताब्दी) की उपलब्धियों का वर्णन किया गया है। इनमें कहा गया है कि साहिल्लवर्मी ने कीरों को पराजित किया जिन्हें चम्बा पर आक्रमण करने के लिए दुर्गर देश के राजा ने भड़काया था। स्पष्ट है कि चम्बा की स्थापना के अनन्तर जब साहिल्लवर्मी अपने राज्य की सीमाओं का चतुर्दिक विस्तार कर रहे थे, तो दुर्गर के राजा ने अपनी ओर बढ़ रहे चम्बा के प्रभाव को रोकने के लिए जम्मू चम्बा के सीमावर्ती पर्वतीय प्रदेशों में रहने वाले कीरों की सहायता की।

दुर्गर जम्मू का प्राचीन नाम है जिसका वर्तमान
रूप डुग्गर है। डुग्गर देश में रहने वाले डोगरा
कहलाये जिस नाम से जम्मू वासी जाने जाते हैं।
उपर्युक्त उल्लेख से सिद्ध होता है कि दसवीं शताब्दी
में जम्मू एक स्वतन्त्र राज्य के रूप में विद्यमान था।

स्थानीय जनश्रुति के अनुसार जम्मू
नगर की स्थापना ३००० वर्ष पूर्व राजा जाम्बू-
लोचन ने की थी जिसके भाई बाहु लोचन ने
तवी नदी के तट पर एक दुर्ग का निर्माण किया
जो आज भी बाहु दुर्ग के नाम से विख्यात है।
जब तैमूर ने भारत पर आक्रमण किया और जम्मू
सन् १३९८-९९ में को भी आक्रांत किया। उस समय राजा मल्लदेव
जम्मू के सिंहासन पर आसीन था। इसका उल्लेख
तैमूर के संस्मरणों में किया गया है। मल्लदेव
के कई पीढ़ियों बाद रणजीत
देव सिंहासन पर बैठे और उन्होंने २२ छोटे
रजवाड़ों को परास्त कर अपने राज्य में
सम्मिलित किया। उस की पुष्टि इस प्रसिद्ध
लोकोक्ति से होती है: "बाइस राज पहाड़ दे
विच जम्मू सरदार"। रणजीत देव सन् १७०२
से १७८१ तक जम्मू के सिंहासन पर आसीन रहा।
अहमद शाह अब्दाली ने, कश्मीर में अपने को स्वतंत्र
घोषित करने वाले अफगान सूबेदार के
विद्रोह को दबाने के लिए रणजीत देव से
सहायता मांगी। रणजीत देव ने अपने पुत्र
ब्रजराज देव और सेनानायक रत्नदेव को
कश्मीर भेजा। उन्होंने सूबेदार को बन्दी
बना दिया और स्थिति को सामान्य करने में
विशेष सहायता की। पंजाब के सिख राज्य ने
प्रथम बार रणजीत देव के काल में
जम्मू पर आधिपत्य जमाने का प्रयास किया
पर विफल रहे। रणजीत सिंह के पश्चात ब्रजराज
देव ने सन् १७८१ से १७८६ तक राज्य किया।

उसके शासनकाल में भी सिखों ने दो बार आक्रमण किया पर पराजित हुए। दूसरे आक्रमण के अन्त में ब्रजराज देव की हत्या की गई। उस के एक वर्षीय पुत्र राजा सम्पूर्ण देव को सिंहासन पर बिठाया गया पर राज्य का कार्यभार अभिभावक के रूप में मियां मोटा सिंह ने संभाल लिया। सिखों ने चौथी बार जम्मू पर आक्रमण किया पर मियां मोटा सिंह ने सिख सेना को खदेड़ दिया। सन् १८०७ ई० में सिखों ने पाँचवी बार जम्मू पर आक्रमण किया। इस बार जम्मू नगर के सिंह द्वार घुमट के स्थान पर घमासान युद्ध हुआ इस युद्ध में एक पन्द्रहवर्षीय डोगरा राजकुमार गुलाब सिंह ने अद्भुत शौर्य और वीरता का प्रदर्शन किया। पर संख्या में भारी होने के कारण इस बार सिखों की विजय हुई और जम्मू पर सिखों का आधिपत्य स्थापित हो गया।

गुलाबसिंह राजा रणजीतदेव के कनिष्ठ भ्राता मियां सूरत सिंह के पौत्र थे। घुमट के युद्ध में गुलाबसिंह द्वारा प्रदर्शित शौर्य की चर्चा से प्रभावित महाराजा रणजीत सिंह के आदेश पर गुलाब सिंह सिख दरबार में उपस्थित हुआ। गुलाब सिंह को सन् १८१२ ई० में सिख सेना में भर्ती किया गया। अपनी योग्यता, कर्तव्यनिष्ठा एवं कार्यकुशलता से गुलाब सिंह ने रणजीत सिंह को इतना प्रभावित किया कि सन् १८१६ ई० में उसे जम्मू का प्रतिनिधि राजा बनाया गया। गुलाबसिंह ने थोड़े ही समय में पश्चिम में रावलपिण्डी तक का क्षेत्र, जिसमें भिम्बर, मीरपुर, कोटली, राजौरी पुंछ इत्यादि राज्य शामिल थे, विजय करके अपने राज्य में सम्मिलित कर दिया। उत्तर में रियासी, चिनैनी, भद्रवाह और

पंजाब

किश्तवाड़ से वर्तमान पीरपंचाल दर्रे तक सम्पूर्ण क्षेत्र अपने राज्य में मिलाकर अपने राज्य की सीमाओं का विस्तार कश्मीर की घाटी एवं लद्दाख तक कर दिया। सन् १८३४ ई० में उसने अपने विश्वसनीय सेनाध्यक्ष ज़ोरावर सिंह को कश्मीर के पूर्व में स्थित लद्दाख को विजय करने के लिए भेजा। लद्दाख की सीमाऐं चीन एवं तिब्बत से लगती थी तथा सैनिक सुरक्षा की दृष्टि से महत्वपूर्ण था। साथ ही यह उस समय भारत-मध्यएशियायी व्यापार का प्रधान केन्द्र था।

ज़ोरावर सिंह ने किश्तवाड़ के रास्ते लद्दाख में प्रविष्ट हुआ तथा लद्दाख, बालतिस्तान तथा पश्चिमी तिब्बत पर विजय प्राप्त करने के सैनिक अभियान आरम्भ किये। इन अभियान में उसे लद्दाख और बालतिस्तान पर विजय प्राप्त करने की अपूर्व सफलता प्राप्त हुई। इन विजय सफलताओं से प्रोत्साहित होकर उसने सन् १८४१ में भारी सेना के साथ तिब्बत पर चढ़ाई की। आरम्भ में कुछ सफलता प्राप्त करने के उपरान्त १५००० फुट की ऊँचाई पर शीत एवं उच्च पर्वतीय जलवायु से अनाभ्यस्त १२ दिसम्बर १८४१ को तिब्बतियों से लड़ता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ। इसके बाद गुलाब सिंह ने एक और सेना लद्दाख भेजी जिसने दीवान मोती राम के नेतृत्व में तिब्बती सेना को पराजित करके तिब्बत को सन् १८४२ ई० में लद्दाख की राजधानी लेह के स्थान पर में एक सन्धि करने को बाध्य किया। उस सन्धि के अनुसार सारा लद्दाख, और मानसरोवर झील के तट पर स्थित मिन्सर नामक गाँव तक का क्षेत्र जम्मू राज्य में सम्मिलित किया गया।

1841 / 1842

लद्दाख की विजय के उपरान्त वर्तमान जम्मू कश्मीर राज्य की स्थापना कैसे हुई यह जानने के लिए लद्दाख का संक्षिप्त परिचय प्राप्त करना आवश्यक है।

लद्दाख

प्राचीन काल में भोट देश के नाम से प्रसिद्ध लद्दाख कश्मीर घाटी के पूर्व में समुद्र तल से २७४० से ६,५६० मी० ऊंचाई पर स्थित एक विस्तृत शीत मरुस्थल है जहां उपज अधिक न होने के कारण जनसंख्या की सघनता दो व्यक्ति प्रति वर्ग कि० मी० है। यद्यपि यहां पर आदिकालीन आर्य जाति की कतिपय बस्तियाँ हैं जो अपनी आदिकालीन संस्कृति को अभी तक सुरक्षित रखे हुए हैं और आर्य भाषा ही बोलते हैं, अधिकांश आबादी ~~मंगोल भोट~~ तिब्बती बौद्ध की है ~~और~~ और भाषा तथा संस्कृति की दृष्टि से भी तिब्बत के अधिक नज़दीक है। इसी कारण लद्दाख को छोटे तिब्बत की संज्ञा से भी अभिहित किया जाता रहा है। लद्दाख एक विस्तृत क्षेत्र का नाम है जिसके अन्तर्गत लेह, कर्गिल, ज़ान्सकार, बाल्तिस्तान के इलाके सम्मिलित हैं। इस समय इस विस्तीर्ण प्रदेश के केवल दो जनपद लेह तथा करगिल भारत के नियन्त्रण में हैं। ज़ान्सकार कर्गिल जनपद के अन्तर्गत है। बाल्तिस्तान का क्षेत्र पाकिस्तान द्वारा अवैध रूप से अधिगृहीत है। लद्दाख के उत्तर पश्चिम में स्थित गिलगित, चित्राल, यासीन, दरेल, हुंजा, नगर आदि क्षेत्र जिन्हें गुलाबसिंह के उत्तराधिकारी रणबीरसिंह ने जीतकर जम्मू-कश्मीर राज्य में ~~मिला~~ सम्मिलित किया था, भी पाकिस्तान के अवैध कब्ज़े में है और, उस क्षेत्र का एक भाग पाकिस्तान ने चीन को कराकुरम राजमार्ग के निर्माण के लिए अवैध रूप से सौंप दिया है। लेह तथा कर्गिल के जनपद श्रीनगर-लेह राजमार्ग से जुड़े हुए हैं और लेह में विमान पत्तन भी है। विश्व का सर्वाधिक ऊंचा सैनिक विमान-पत्तन लद्दाख के चुशूल के स्थान पर है और लद्दाख में ही सायचिन ग्लेशियर विश्व का सर्वाधिक ऊंचा

युद्ध स्थल है। सैनिक सुरक्षा की दृष्टि से लद्दाख अतीव महत्वपूर्ण है क्योंकि इस की सीमायें चीन, तिब्बत तथा मध्य एशिया के साथ मिलती हैं। लद्दाख की राजधानी लेह व्यापार का महत्वपूर्ण केन्द्र रही है, क्योंकि इस स्थान पर कश्मीरी, भारतीय, तिब्बती और मध्य एशिया के व्यापारियों के मध्य व्यापार वस्तुओं का कई शताब्दियों तक आदान प्रदान होता रहा है। 1947 में पाकिस्तान और 1962 में चीन के आक्रमणों के कारण यह व्यापार जिससे कश्मीरी व्यापारी इतने माला माल हो गए थे कि वे हुक्के में पानी के स्थान पर दूध भरते थे, का प्रयोग करते थे, अब बिल्कुल ठप हो गया है और पश्मीना शाल उद्योग लगभग बन्द हो गया है। (1962 के आक्रमण के परिणामस्वरूप लद्दाख का एक महत्वपूर्ण भाग चीन के नियन्त्रण में है।

छठा भाग

लद्दाख के अधिकांश लोग बौद्धमतावलम्बी हैं। यहां बौद्धमत का सर्वप्रथम प्रचार कश्मीरी बौद्ध प्रचारकों ने किया और सर्वास्तिवाद बौद्ध सम्प्रदाय की प्रतिष्ठा की। भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण की श्रीनगर शाखा ने यहां उत्खनन के दौरान कई प्राचीन स्तूपों को प्रकाश में लाया है जो इस क्षेत्र में बौद्ध धर्म की प्राचीनता को सिद्ध करते हैं। कालान्तर में जब पद्मसम्भव ने तिब्बत में तान्त्रिक बौद्धमत की प्रतिष्ठा की, जो बाद में लामाधर्म के नाम से विख्यात हुआ, तो लद्दाख भी तान्त्रिक बौद्धमत के प्रभाव में आ गया और इस समय बौद्ध धर्म का यही रूप लद्दाख में वर्तमान है। कश्मीर में इस्लाम धर्म की स्थापना के बाद लद्दाख भी इस धर्म के प्रभाव में आ गया और इस प्रकार इस समय लद्दाख की आबादी बौद्ध और मुसलमानों में बटी हुई है यद्यपि लद्दाख व लेह जनपद में मुसलमानों की अपेक्षा बौद्धमतावलम्बियों की संख्या अत्याधिक है। इस के विपरीत करगिल में जो घाटी के अधिक समीप है, मुसलमानों की

संख्या अधिक है पर बाटी की तुलना में यहां मुसलमान आबादी का अधिकांश भाग शिया-मतावलम्बी है और धार्मिक क्षेत्र में ~~कश्मीर से अधि~~ की अपेक्षा शिया मत प्रधान ईरान के अधिक सन्निकट है।

<u>इतिहास</u>

राजनीतिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण लद्दाख प्रदेश का प्राचीन इतिहास अज्ञात है। यूनानी इतिहासकारों ने सिन्धु नदी के तटों के पर बने बल्मीकों का उल्लेख किया है जिन से सोने की प्राप्ति होती थी। लद्दाख कुशान साम्राज्य के भी अन्तर्गत था इस की पुष्टि लेह के ~~सम~~ पास समीपवर्ती गाँव खलसी से प्राप्त खरोष्ठी लिपि में उत्कीर्ण कुशान नरेश वीमा कदफिसस का एक शिलालेख से होती है। कुशाल काल के अनन्तर सम्पूर्ण क्षेत्र छोटे छोटे राजवाड़ों में बट गया जो आम तौर पर स्वतन्त्र थे पर समय समय पर कश्मीर के प्रभावशाली एवं पराक्रमी राजाओं के प्रभाव में आकर उन की प्रभुसत्ता भी स्वीकार करते रहे। सर्वप्रथम कार्कोट नरेश ललितादित्य ने लद्दाख पर अपना आधिपत्य स्थापित किया। तदनन्तर अवन्तिवर्मा, शङ्करवर्मा, शाहबुदीन, जैनुलाबदीन, मिर्ज़ा हैदर दुगलत तथा मुगल सम्राटों ने भी अपनी प्रभुसत्ता यहां स्थापित की। शाहजहां तथा औरंगज़ेब ने लद्दाख को अपने साम्राज्य में ~~सिल~~ सम्मिलित करने के लिए एक दो सैनिक अभियान भी भेजे पर अपने उद्देश्य में सफल नहीं हुए।

सत्तरहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में लद्दाख स्थानीय शासक ~~ब~~ सेनगे नामग्याल (सन् १६१६-४२ ई०) के नियन्त्रण में रहा। नामग्याल ने ज़ांस्कार तक सभी छोटे राजवाड़ों को पराजित कर अपने राज्य में सम्मिलित किया। उसने लद्दाख में कई

बौद्ध विहारों की स्थापना की जिनमें हेमिस ~~बिहार~~ गोन्पा विश्वभर में प्रसिद्ध है। बौद्ध विहार या मठ को लद्दाखी में गोन्पा कहते हैं। सम्भवतः इन्ही के राज्य में अलची विहार की भी स्थापना हुई जहां के तांत्रिक बौद्ध धर्म सम्बन्धी भित्तिचित्र अपनी उत्कृष्ट कला के लिए ~~महान~~ ख्याति अर्जित कर चुके हैं। नामग्याल के पश्चात् कई राजा इस प्रदेश में राज्य करते रहे पर इन में से कोई भी किसी विशेष उपलब्धि के लिए प्रसिद्ध नहीं है। लद्दाख के परवर्ती ~~आधुनिक~~ इतिहास की महत्वपूर्ण घटना गुलाब सिंह द्वारा इस की विजय और इसे जम्मू राज्य में सम्मिलित किया जाना है। इस विजय की चर्चा ऊपर की जा चुकी है।

जम्मु कश्मीर राज्य की स्थापना

सन् १८३९ ई० में महाराजा रणजीत सिंह की मृत्यु हुई। उसके उत्तराधिकारी सिख साम्राज्य को एक सूत्र में बांधने में असफल सिद्ध हुए और साम्राज्य में सशक्त एवं दृढ़ प्रशासन स्थापित भी न कर सके। दुर्बल शासन से सिख साम्राज्य की नींवें हिलने लगीं। स्थिति का लाभ उठाते हुए अंग्रेज़ों ने सन् १८४५-४६ में सिख साम्राज्य पर तीसरी बार आक्रमण किया और सुबराँव के युद्ध में सिखों को पराजित करने में सफल हुए। सिखों की पराजय का कारण दुर्बल नेतृत्व और सिखों और गुलाब सिंह के सेनाओं में उचित तालमेल का अभाव था। अंग्रेज़ों ने सिखों को ~~अपना~~ उनका राज्य वापस करने के लिए डेढ़ करोड़ रुपये हरजाना के रूप में मांगे। पर सिखों ने इतनी बड़ी रकम देने में असमर्थता प्रकट की। फलतः ९ मार्च १८४६ को सिखों को अंग्रेज़ों के साथ ~~लाहौर में सन्धि~~ करने पड़ी जिसे लाहौर की संधि कही जाती है। इस संधि के फलस्वरूप सिखों ने रावी और सिन्धु नदी के मध्य का सम्पूर्ण क्षेत्र एवं कश्मीर और हज़ारा

का इलाका अंग्रेज़ों को सौंप दिया। जम्मू के राजा गुलाब-सिंह ने, जो सिखों की ओर से लड़ रहे थे, हरजाने की रकम में से 75 लाख रुपये देने की पेशकश की। परिणामस्वरूप लाहौर संधि के केवल एक सप्ताह के अनन्तर 16 मार्च 1846 को अमृतसर में एक और संधि पर हस्ताक्षर किए गये। जो अमृतसर संधि के नाम से प्रसिद्ध है। इस संधि के अनुसार सिख दरबार और अंग्रेज़ों ने गुलाब सिंह को जम्मू और काश्मीर का (सिखों की अधीनता से मुक्त) स्वतंत्र महाराजा स्वीकार कर लिया।

'अमृतसर संधि' के विषय में भिन्न भिन्न सम्मतियां प्रकट की गई हैं। कई समीक्षकों ने इसे विधिवत् रूप से सम्पन्न संधि माना है तो कईयों ने इसे सौदेबाज़ी कहा है। कई समीक्षकों ने गुलाब सिंह पर आरोप लगाया है कि सिखों की अधीनता से मुक्त स्वतंत्र राज्य प्राप्त करने के उद्देश्य से ही उसने सिखों को पराजित करने के लिए अंग्रेज़ों के साथ षड़यन्त्र रचा। जहां तक अंग्रेज़ों का सम्बन्ध है इन संधियों पर हस्ताक्षर करने का उनका उद्देश्य सिख दरबार को शक्तिहीन करना और उत्तर पश्चिम की सीमाओं से भारत पर होने वाले किसी आक्रमण को रोकने के लिए दोनों राज्यों (सिख व गुलाब सिंह के राज्य को) का ढाल के रूप में उपयोग करना बताया जाता है।

अमृतसर की संधि के अनुसार अंग्रेज़ सरकार ने कश्मीर की घाटी समेत रावी नदी और सिन्धु नदी के बीच का सारा पर्वतीय क्षेत्र गुलाब सिंह को सौंप दिया। इस प्रकार रावलपिंडी और एबटाबाद के क्षेत्र भी गुलाब सिंह के राज्य का अङ्ग बने। परन्तु बाद में गुलाब सिंह ने जेहलम नदी और सिन्धु नदी के बीच का क्षेत्र छोड़कर उसके बदले जम्मू के दक्षिण का कुछ मैदानी क्षेत्र प्राप्त कर लिया। गुलाब सिंह के उत्तराधिकारी रणवीर सिंह ने

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

१. "नीलमतपुराण" सम्पादन एवं अनुवाद डा० वेद कुमारी

२. "राजतरङ्गिणी" लेखक कल्हण पण्डित सम्पादन एवं अनुवाद एम० ए० स्टाइन.

३. "राजतरङ्गिणी" लेखक जोनराज सम्पादन ~~एवं~~ ~~[illegible]~~ श्री कण्ठ कौल

४. "जैन राजतरङ्गिणी" लेखक श्रीवर सम्पादन श्री कण्ठ कौल

५. "तारीखि हसन" लेखक पीर हसन शाह सम्पादन एवं अनुवाद मौलवी इब्राहीम

६. "कश्मीर अण्डर दि सुल्तान्ज़" मोहीबुल हसन

७. "मुस्लिम रूल इन कश्मीर" आर० के० पारिमू

८ "सिख रूल इन कश्मीर" आर० के० पारिमू

९ "हिस्ट्री आफ कश्मीर" पी० एन० के० बामज़ई

१० "वैली आफ कश्मीर" वाल्टर लारेंस

११. "जम्मू एण्ड कश्मीर टेरिट्रीज़" फ्रेड्रिक ड्रिउज़

१२. "हिस्ट्री एण्ड आरक्योलाजी आफ कश्मीर"

"थ्रू दि एजिज़" एस० एन० धाली

"गुलाब सिंह" के० एम० पानिकर

१३ "लद्दाख" ए० कनिंघम

१४ "कश्मीरी साहित्य का इतिहास" डा० शशि शेखर

१५ "कश्मीर देश व संस्कृति" शिवदान सिंह चौहान

१६ "हिस्ट्री एण्ड कलचर आफ एनशेंट गान्धार"

१७

P.T.O.

१०३ वैस्टर्न हिमालयाज़" B.K. बी० के० कौल डेम्बी
१८ " कार्पस ऑफ द शारदा इन्स्क्रिप्शन्स ऑफ
कश्मीर" बी० के० कौल डेम्बी.

गिलगित और मुज़फ्फराबाद का क्षेत्र भी अपने अधिकार में कर लिया। इस प्रकार जम्मू-कश्मीर राज्य फैलकर उत्तर में सिंकियांग, पूर्व में तिब्बत, और उत्तर पश्चिम में अफगानिस्तान और पख्तूनिस्तान तक फैल गया। कहना न होगा कि इस विस्तृत राज्य की स्थापना में गुलाबसिंह, रणवीरसिंह और उनके पराक्रमी, ~~अद्भुत शौर्य से सम्पन्न, साहसी~~ एवं कर्तव्यनिष्ठ सेनानायकों का विशेष योगदान रहा। कश्मीर, ~~मुसलमान~~ मुस्लिम शासन की स्थापना के अनन्तर केवल ढाई सौ वर्ष तक ही स्थानीय शासन को स्थिर रख सका। तदनन्तर स्वेच्छा से क्रमशः मुगल, ~~सिख~~ अफगान, और सिख साम्राज्य का अंग बना और अब सिख शासन की समाप्ति के अनन्तर अमृतसंधि के परिणामस्वरूप गुलाबसिंह द्वारा स्थापित डोगरा राज्य का अंग बन गया जिसके अन्तर्गत घाटी समेत औ जम्मू, लद्दाख तथा उल्लिखित क्षेत्र सम्मिलित थे।

(इस प्रकार सन् १८४६ में जम्मू-कश्मीर राज्य की स्थापना हुई और डोगरा शासन की प्रतिष्ठा हुई। सौ वर्ष के डोगरा शासन के उपरान्त ~~कश्मीर~~ राज्य का २६ अक्टूबर १९४७ को भारत में विलय हो गया। जम्मू कश्मीर राज्य में डोगरा शासन, राज्य का भारत में विलय और भारत के संविधान में कश्मीर सम्बन्धी अस्थायी धारा ३७० का समावेश, इन विषयों पर "पहाड़" के अगले अङ्क में चर्चा करेंगे।)

श्री गणेशाय

Ethnic Groups

1846 से 1947 तक ?

समाज

काया

स्थानी - केहरा / बासावली

नवधा

1- जीवन
2- दुर्गा ...
3- मूलनी